International Journal of Sanskrit Research 2015; 1(4): 46-48

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2015; 1(4): 46-48
© 2015 IJSR
www.sanskritjournal.com
Received: 09-04-2015
Accepted: 02-05-2015

डॉ0 जितेन्द्र कुमार दूब
ज्योतिष विभाग

उपनयन संस्कार की आवश्यकता

डॉ0 जितेन्द्र कुमार दूब

उपनयन :–
वर्तमान युग में उपनयन संस्कार प्रतीकात्मक :पधारण करता जा रहा है। विरल परिवारों में यथाकाल विधि–व्यवस्था के अनुःप उपनयन संस्कार होते है। एक ही दिन अल्पावधि में चूड़ाकरण, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ और केशान्त कर्म के साथ समावर्तन संस्कार सहित सभी महत्वपूर्ण संस्कार एकसाथ कर दिये जाते है।
मनुस्मृति के अनुसार विभिन्न वर्णों के लिए आयु की सीमा का निर्धारण किया गया है। यथा –

ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे।
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे।। – मनुस्मृति

यदि किसी वटु की गुरुशुद्धि नहीं हो तो क्या करे ? – ज्योतिषचन्द्रिका के अनुसार गोचराष्टक वर्गों से यदि किसी वटु की गुरुशुद्धि नहीं बनती हो तो सूर्य के मीन राशि में आने पर चौत्र में उपनयन संस्कार करना चाहिए।

यथा : – गोचराष्टकवर्गाभ्यां यदि शुद्धिर्न जायते।
तस्योपनयनं कुर्वीत चौत्रे मीनगते रवौ।।

क्या आठवें वर्ष में भी गुरुशुद्धि देखनी चाहिए ? – पौलस्त्यजी के मतानुसार आठवें वर्ष में गुरुशुद्धि नहीं हो तो उपनयन नहीं करना चाहिए।

यथा : – यदा गर्भाष्टमे वर्षे शुद्धिर्नास्ति बृहस्पतेः।
अष्टमे वा तथाऽप्येवं व्रतं तत्र न कारयेत।।

उपनयन संस्कार किस समय करे ? – सामान्यतया मन्वादि ऋषियों ने वटु के उपनयन का समय ब्राह्मणों के लिए गर्भ से आठवाँ वर्ष, क्षत्रियों के लिए ग्यारवाँ वर्ष तथा वैश्यों के लिए बारहवाँ वर्ष निर्धारित किया है।

यथा : – गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः।।
द्विज : – द्वाभ्यां जन्मसंस्काराभ्यां जायते इति द्विजः।

मलमूत्र त्याग करते समय यज्ञोपवीत को दाहिने कान में क्यों लपेटते हैं ? – १. गृह्यसूत्रकारों ने उपवीत को शौच, लघुशंका के समय दाहिने कान में लपेटने का विधान बताया है।

यथा : – दिवासन्ध्यासु कर्णस्थबह्मसूत्र उदङ्मुखः।
कुर्यान्मूत्रपुरीषे तु रात्रौ च दक्षिणामुखः।।
अन्य : – निवीती दक्षिणकर्णे यज्ञोपवीतं कृत्वा.....पुरीषे विसृजेत।।
(वैखानसधर्मप्रश्र, २–६–१, शौचविधि)

अन्य :– यज्ञोपवीतं शिरसि दक्षिणकर्णे वा कृत्वा। (बौधायनगृह्यसूत्र)
अन्य :– ....कर्णस्थब्रह्मसूत्र उदङ्मुखः। कुर्यान्मूत्रपुरीषे च...।।
अन्य :– कर्णस्थब्रह्मसूत्रो मूत्रुपरीषं विसृजति।। (आनिवेश्य गृह्यसूत्र)

Correspondence
डॉ0 जितेन्द्र कुमार दूब
ज्योतिष विभाग

और भी कई अन्य कारण है जैसे सिर मानव शरीर में ज्ञान का केन्द्र होता है तथा दाहिने कान में रुद्र, आदित्य, वसु आदि देवताओं का वास बताया गया है, अतः इस क्षेत्र को अपवित्रता से मुक्त रखने हेतु यज्ञोपवीत को कान पर रखने का विधान किया गया है।

यथा :– आदित्या वसवो रुद्रा वायुरग्निश्च धर्मराट्।
विप्रस्य दक्षिणेकर्णे नित्यं तिष्ठन्ति देवताः।।
अन्य :– मरुत्सोम इन्द्राग्नी मित्रावरुणौ तथैव च।
एते सर्वे च विप्रस्य नित्यं तिष्ठन्ति दक्षिणे।। (गोभिल)

यज्ञोपवीत का हमारे स्वास्थ्य से भी गहरा सम्बन्ध है। यह हमें शुचिता–पवित्रता का पाठ पढ़ाता है। यह मलमूत्र त्याग के पूर्व दाहिने कान को बाँधकर आँतों की अपकर्षण शक्ति को बढ़ाता है, जिससे कब्ज दूर होता है। मूत्राशय की मांसपेशियों का संकोचन वेग से होने लगता है। इसके परीक्षण विदेशों में होते रहे है और यज्ञोपवीत को कान में लपेटने से वीर्यक्षरण और रक्तचाप में नियन्त्रण से होने वाले लाभ को वहाँ स्वीकार किया गया है। योगशास्त्र में स्मरणशक्ति तथा नेत्रज्योति बढ़ाने के लिए श्कर्णपीडासनञ्च योग का महत्व बताया गया है। इटली के प्रसिद्ध न्यूरो सर्जन प्रोफेसर ऐनारीका पिरांजली ने यह सिद्ध किया है कि कान में जनेऊ लपेटने से रक्तचाप नियन्त्रित रहता है और हृदय मजबूत होता है।

शिखा रखने के लाभ को निम्न रूप से दृष्टिगत किया जा सकता है –

१. शिखा रखने के तथा उसके नियमो का यथावत् पालन करने से मनुष्य सद्बुद्धि, सदाचार आदि की प्राप्ति होती है।
२. शिखा रखने से आत्म शक्ति प्रबल होती है।
३. शिखा रखने से मनुष्य धार्मिक, सात्त्विक और संयमी बनता है।
४. श्खा रखने से मनुष्य प्राणयाम, अष्टाङ्गयोगादि यौगिक क्रियाओ को ठीक–ठीक कर सकता है।
५. शिखा रखने से मनुष्य लौकिक तथा पारलौकिक समस्त कार्यों मे सफलता मिलती है।
६. शिखा रख्ने से मनुष्य देवता की रक्षा करते है।
७. शिखा रखने से मनुष्य की नेत्रज्योति सुरक्षित रहती है।
८. शिखा रखने से मनुष्य स्वस्थ, बलिष्ट, तेजस्वी और दीर्घायु होता है।
९. बलायुर्वयो वृद्धिश्च चूडाकर्मफलं स्मृतम् – बल, आयु एवं तेज की वृद्धि ही चूडाकर्म–संस्कार फल है। महर्षि वसिष्ठ का वचन है–चौलेनैवायुषो वृद्धिः।
१०. चूडाकरण से त्वचा सम्बन्धी रोगों का नाश होता है। शिखा रखकर शेष बालों को मुँडा देने से रक्तविकार, तापजन्य (गरमीजन्य) तापमान कम हो जाता है। बालकों के फोडे–फुंसी समाप्त हो जाते है।
११. मुण्डन के पश्चात् सिर में मलाई की मालिश करने से मस्तिष्क को शीतलता मिलती है। और बौद्धिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है।
१२. गोखुराकार अर्थात् गाय के खुर के सदृश प्रमाण की शिखा रखने से दशमद्वार की रक्षा होती है।
१३. शिखा धारण से सुषुम्णा नाडी की रक्षा होती है। सुषुम्णा के नीचे बुद्धि तत्त्व का केन्द्र है, इसकी रक्षा शिखाधारण से होती है।

वेदारम्भ :–

वेदारम्भ उपनयन संस्कार के पश्चात् किया जाता है जो अब प्रतीकात्मक ही रह गया है। वेद की विभिन्न शाखाओं की रक्षा के लिए वेदाभ्यास हेतु यह संस्कार प्रचलित था। कालान्तर में यह संस्कार केवलमात्र पुरोहितों के परिवारों में ही सीमित रह गया है, यही कारण है कि वेदों की अधिकांश शाखाओं का लोप हो चुका है।

इस संस्कार के पहले मेधाजनन नामक एक उपाङ्ग संस्कार होता है, इसे करने से बालक की मेधा, विद्या तथा श्रद्धा बढ़ती है। इस संस्कार में ब्रह्मचारी बटुक अनेक विद्याओं में पारङ्गत हो जाता है।

विद्यया लुप्यते पापं विद्ययाऽऽयुः प्रवर्धते।
विद्यया सर्वसिद्धः स्याद्विद्ययाऽमृतश्नुते।। – ज्योतिर्निबन्ध

अर्थात्वेद विद्या के अध्ययन से सभी पापों का लोप हो जाता है, आयु की वृद्धि होती है, सारी सिद्धियाँ प्राप्त होती है। यहाँ तक कि उसके समक्ष साक्षात्अमृत रस अशन–पान के :प में उपलब्ध हो जाता है।

वर्तमान पद्धतियों में चतुर्वेदों के मन्त्रों का संग्रह कर दिया जाता है, जिसे उपनयन के बाद सावित्री–सरस्वती–लक्ष्मी–गणेश आदि की अर्चना के बाद उपनीत बटुक से उसका औपचारिक उच्चारण मात्र करवा दिया जाता है। अतः वर्तमान में यह संस्कार उपयन के साथ ही कर दिया जाता है।

द्वितीय, तृतीय वर्षों में क्रमशः श्श्वैदिक महाव्रतञ्च तथा श्श्उपनिषद्–व्रतञ्च किया जाता था, जिसमें वेदों की ऋचाओं तथा उपनिषदों का श्रद्धापूर्वक पाठ किया जाता था और अन्त में सावित्री स्नान होता था। इसके पश्चात्ही वेदाध्यायी श्श्स्नातकञ्च कहलाता है।

गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन, अग्निस्थापन, पञ्चभूसंस्कार सहित ग्रहशान्त्यादि कर्म के पश्चात्प्रातः काल शुद्ध वस्त्र धारण करके मण्ड्प पर प्रवेश करके प्रायश्चित सङ्कल्प करे :–

समावर्तन संस्कार :–

समावर्तन का अर्थ है विद्याध्ययन प्राप्तकर ब्रह्मचारी युवक का गुरुकुल से घर की ओर प्रत्यावर्तन।

तत्र समावर्त्तनं नाम वेदाध्यनानन्तरं गुरुकुलात्स्वगृहागमनम्वीर मित्रोदय।।

विष्णुस्मृति के अनुसार कुब्ज, वामन, जन्मान्ध, बधिर, पङ्गु तथा रोगियों को यावज्जीवन ब्रह्मचर्य में रहने की व्यवस्था है :–

कुब्जवामनजात्यन्धक्लीब पङ्वार्त रोगिणाम्।
व्रतचर्या भवेत्तेषां यावज्जीवमनंशतः।।

समावर्तन संस्कार गृहस्थ जीवन में प्रवेश की अनुमति देता है। उपनयन संस्कार से प्रारम्भ होने वाली शिक्षा की पूर्णता के बाद ब्रह्मचर्य का कठोर जीवन व्यतीत करने वाले संस्कारित युवक को इस संस्कार के माध्यम से गार्हस्थ जीवन जीने की शिक्षा दी जाती थी। ऐसे संस्कारित युवक की श्श्स्नातकञ्च संज्ञा होती है। स्नातक के तीन प्रकार है – १. विद्या स्नातक, २. व्रत स्नातक, ३. विद्याव्रत स्नातक। इनमें तीसरे प्रकार के स्नातक को ही गृहस्थ जीवन में प्रवेश का अधिकार मिलता था क्योंकि ऐसा ही ब्रह्मचारी विद्या की पूर्णता के साथ ब्रह्मचर्य व्रत की भी पूर्णता प्राप्त कर लेता था। वर्तमान काल में भले १०–१२ वर्ष के बालक का उपनयन संस्कार किया जाता हो, किन्तु उसे तत्काल समावर्त्तन का अधिकारी बना दिया जाता है।

वर्तमान में शिक्षण संस्थाओं में दीक्षान्त समारोह किया जाता है, वह समावर्त्तन संस्कार का अनुकरण ही है। इसके बाद शिष्य को गृहस्थाश्रम में जाने की अनुमति मिल जाती है। शिष्य आचार्य के निम्न उपदेशों का जीवनभर अनुसरण करता है :– १. सत्यं वद। २. धर्मं चर। ३. स्वाध्यायान्माप्रमदः।

आश्रमहीन रहना दोषपूर्ण है, अतः समावर्त्तन के बाद गृहस्थ बनना अपरिहार्य है, अन्यथा प्रायश्चित्त करना होता है। यथा –

अनाश्रमी न तिष्ठेच्च क्षणमेकमपि द्विजः।
आश्रमेण विना तिष्ठन्प्रायश्चित्तीयते हि सः।। – दक्षस्मृति

शुभ मुहूर्त्त में गणेश–मातृका–नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचन, नवग्रहादि पूजन के पश्चात्आठ मन्त्रपूरित कलशों का अभिषेक किया जाता है तत्पश्चात्स्नातक दही–तिल का भक्षण करके और क्षौरकर्म करके गूलर की दातून से मुख की शुद्धि करके उबटन लगाकर ऊष्णजल से स्नानकर नाक, कान और नेत्रों में चन्दन लगाता है। इसके बाद शुद्ध वस्त्र, पुष्पमाला आदि धारण करता है। वर्तमान काल में यह संस्कार भी उपनयन संस्कार के साथ ही सम्पन्न कर दिया जाता है।